International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 20-05-2020; Accepted: 06-06-2020; Published: 22-06-2020
www.hindijournal.com
Volume 6, Issue 3, 2020, Page No. 63-66

भारत–भारतीः पुनर्मूल्यांकन

डॉ. मनोज कुमार कैन
पी.जी.डी.ए.वी. महाविद्यालय, दिल्ली, भारत

सारांश
'भारत–भारती' मैथिलीशरण गुप्त की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कृति है। इस कृति के लेखन की प्रेरणा उन्हें महावीर प्रसाद द्विवेदी और श्रीमान् राजा रामपाल सिंह से मिली थी। यह मैथिलीशरण गुप्त की एक ऐसी कृति है, जिसके द्वारा हम उनके भारतीय संस्कृति के प्रति गहरे प्रेम और जुड़ाव का सहज ही अनुमान लगा सकते हैं। इस कृति में उन्होंने एक तरफ भारतवर्ष के गौरवशाली इतिहास को व्याख्यायित किया है, तो दूसरी तरफ इसके वर्तमान और भविष्य को आशान्वित और उन्नति का मार्ग भी प्रशस्त किया है। 'भारत भारती' के द्वारा गुप्त जी ने भारत की पराधीन जनता के अंदर नया जोश और स्फूर्ति का संचार किया। इस कृति ने उनको भारत में राष्ट्रकवि के रूप में प्रतिष्ठा दी। खड़ीबोली हिंदी की प्रतिष्ठा में भी इस कृति का महत्त्वपूर्ण योगदान है। लेकिन दुःख इस बात का है कि वर्तमान पीढ़ी इस कृति से अनभिज्ञ है। आज जरुरत है कि ऐसी पुस्तकों का पुनर्मूल्यांकन किया जाए और वर्तमान पीढ़ी को इसे पढ़ने और इससे प्रेरणा ग्रहण करने के लिए प्रेरित भी किया जाए।

मूल शब्द भारत–भारती, मैथिलीशरण गुप्त, पुनर्मूल्यांकन

प्रस्तावना
'भारत–भारती' मैथिलीशरण गुप्त की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कृति है। इस कृति के लेखन की प्रेरणा उन्हें महावीर प्रसाद द्विवेदी और श्रीमान् राजा रामपाल सिंह से मिली थी। राजा रामपाल सिंह ने उर्दू के प्रसिद्ध रचनाकार मौलाना हाली की महत्त्वपूर्ण कृति 'मुसद्दस' से प्रेरित होकर इस ढंग की एक काव्य पुस्तक खड़ीबोली में लिखने के लिए मैथिलीशरण गुप्त से आग्रह किया था। उनके आग्रह को स्वीकार कर मैथिलीशरण गुप्त ने खड़ीबोली में 'भारत–भारत' की रचना की। जैसाकि मैथिलीशरण गुप्त ने 'भारत–भारती' में राजा रामपाल सिंह को संबोधित करते हुए लिखा भी है–

"जैसा कुछ हो सका, आपका यह आज्ञा–पालन है, लीजै,
भारत माता की सेवा में इसे आप ही अर्पित कीजे।
मेरी प्रभु से यही विनय है–स्वावलम्ब हम सबको दीजै,
माँ की इस सुख–दुःख कथा से सब पुत्रों का हृदय पसीजे"[1]

यहाँ मैथिलीशरण गुप्त ने न सिर्फ राजा रामपाल सिंह को संबोधित किया है, बल्कि उन्होंने 'भारत भारती' के लेखन के उद्देश्य को भी स्पष्ट कर दिया है। उन्होंने यह कृति भारत माता की सेवा के लिए रची थी। इसके माध्यम से वे भारत वासियों को उनके कर्तव्यबोध के प्रति सचेत करना भी चाहते थे। खड़ीबोली में काव्य लेखन की प्रेरणा मैथिलीशरण गुप्त को महावीर प्रसाद द्विवेदी से मिली थी। जैसाकि हम सभी जानते हैं कि हिंदी कविता द्विवेदी युग में ही पहली बार खड़ीबोली में लिखी गई। इससे पहले ब्रजभाषा हिंदी काव्य लेखन की मुख्य भाषा थी। महावीर प्रसाद द्विवेदी की प्रेरणा से ही खड़ीबोली में काव्य लेखन आरम्भ हुआ। द्विवेदी युगीन सभी लेखकों पर उनका गहरा प्रभाव था। उनका यह प्रभाव मैथिलीशरण गुप्त पर सर्वाधिक था। यह भी कहना गलत नहीं होगा कि उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व और कृतित्व पर महावीर प्रसाद द्विवेदी का प्रभाव था। उनके समस्त चिंतन पर यह प्रभाव स्पष्तः देखा जा सकता है।
'भारत–भारती' मैथिलीशरण गुप्त की एक ऐसी कृति है, जिसके द्वारा हम उनके भारतीय संस्कृति के प्रति गहरे प्रेम और जुड़ाव का सहज ही अनुमान लगा सकते हैं। इस कृति ने उनको भारत में राष्ट्रकवि के रूप में प्रतिष्ठा दी। जैसाकि डॉ. नगेन्द्र ने 'भारत भारती' और मैथिलीशरण गुप्त पर विचार करते हुए लिखा है कि "भारत–भारती ने हिंदी भाषियों में जाति और देश के प्रति गर्व और गौरव की भावनाएं प्रबुद्ध की और तभी से यह राष्ट्रकवि के रूप में विख्यात हुए।"[2] यह कृति तत्कालीन समय में सम्पूर्ण भारत के आजादी के दीवानों की प्रेरणागान बन गई। प्रत्येक संस्थानों के सुबह की प्रार्थनाओं में इसका दैनिक गान किया जाने लगा था। हिंदी भाषा से प्रेम करने वाले लोगों की यह कृति केंद्र–बिंदु बन गई थी। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के शब्दों में कहें तो 'भारत–भारती' "पहले–पहल हिंदी प्रेमियों का सबसे अधिक ध्यान खींचने वाली पुस्तक बन गई। यह पुस्तक प्रभातफेरियों, राष्ट्रीय आन्दोलनों, शिक्षा संस्थानों, प्रातःकालीन प्रार्थनाओं द्वारा भारत के गांवों–नगरों में गाये जाने लगी।"[3] खड़ीबोली हिंदी की प्रतिष्ठा में भी इस कृति का महत्त्वपूर्ण योगदान है। लेकिन दुःख इस बात का है कि वर्तमान पीढ़ी इस कृति से अनभिज्ञ है। आज जरुरत है कि ऐसी पुस्तकों का पुनर्मूल्यांकन किया जाए और वर्तमान पीढ़ी को इसे पढ़ने और इससे प्रेरणा प्राप्त करने के लिए प्रेरित भी किया जाए।
तत्कालीन समय में अंग्रेजों द्वारा चहुँओर यह साबित करने का प्रयास किया जा रहा था कि भारत के लोग असभ्य हैं और भारत के लोगों को सभ्य बनाने का काम केवल अंग्रेज ही कर सकते हैं। ऐसी परिस्थितियों में 'भारत– भारती' अंग्रेजों के इस अतिवाद का पूरी क्षमता से मुंहतोड़ जवाब देने का प्रयास करती है। इस कृति के द्वारा मैथिलीशरण गुप्त ने भारत के अतीत के गौरव गान के साथ–साथ वर्तमान दशा पर क्षोभ भी प्रकट किया है। डॉ नगेंद्र का कहना है कि "वस्तुतः द्विवेदी युगीन कवियों ने बड़ी श्रद्धा और भक्ति से अतीत के गौरव का गान करते हुए देश की वर्तमान दशा पर क्षोभ प्रकट किया है। इस प्रकार की रचनाओं में गुप्त जी की 'भारत–भारती' सर्वश्रेष्ठ और सशक्त रचना है।"[4] मैथिलीशरण गुप्त को इस बात की चिंता है कि जिस देश का अतीत इतना गौरवशाली रहा है, वह देश आज इस दुर्दशा में क्यों है? देश के अतीत को याद करते हुए 'भारत–भारती' की प्रस्तावना में मैथिलीशरण गुप्त लिखते हैं कि "एक वह समय था कि यह देश विद्या, कला कौशल और सभ्यता में संसार का शिरोमणि था और एक यह समय है कि इन्हीं बातों का इसमें

शोचनीय अभाव हो गया है। जो आर्य जाति कभी सारे संसार को शिक्षा देती थी वही आज पद–पद पर पराया मुँह ताक रही है। ठीक है, जिसका जैसा उत्थान उसका वैसा ही पतन।"[5]

'भारत भारती' को हमेशा से राष्ट्रीयता की भावना से ओतप्रोत कृति के रूप में देखा गया है। भारतेंदु युग में जिस राष्ट्रीयता की भावना ने जोर पकड़ा था, द्विवेदी युगीन रचनाकारों ने उसमें इजाफा करने का काम किया। कहना गलत न होगा कि द्विवेदी युग में बढ़ती राजनीतिक चेतना के परिणामस्वरूप ही राष्ट्रीयता ने पैर पसारे। मैथिलीशरण गुप्त की राष्ट्रीयता के संदर्भ में रामस्वरूप चतुर्वेदी का कहना है कि "मैथिलीशरण गुप्त की राष्ट्रीयता पराधीनता के दौर में विकसित होकर भी आत्मीय भाव से सहज है। उसमें आक्रामकता का अभाव है, तो वैष्णव भावना की निष्ठा है। यह कई विशेषताएँ मिलकर महात्मा गाँधी की राष्ट्रीयता के समतुल्य चलती हैं। इसलिए गाँधी जैसे राष्ट्रपिता हैं, वैसे ही सहज भाव से मैथिलीशरण गुप्त राष्ट्रकवि हैं।"[6]

'भारत–भारती' के प्रकाशन वर्ष को लेकर साहित्यकारों में मतैक्य है। कुछ साहित्यकारों ने इसका प्रकाशन वर्ष 1912 ई. माना है, तो कुछ ने 1913 ई.। साहित्यकारों के मतैक्य के बीच यह तथ्य सत्य है कि मैथिलीशरण गुप्त ने 'भारती–भारती' के लेखन का आरंभ 1911 ई. में रामनवमी के दिन किया था और समापन 1912 ई. में जन्माष्टमी के दिन। जैसाकि उन्होंने इस पुस्तक की प्रस्तावना में लिखा भी है, "श्रीरामनवमी सं. 1968 से आरंभ करके भगवान की कृपा से आज (जन्माष्टमी 1969 वि.) मैं इसे समाप्त कर सका हूँ।"[7]

'भारत–भारती' क्रमशः तीन कालखण्डों– अतीत खण्ड, वर्तमान खण्ड और भविष्य खण्ड में विभाजित है। अतीत खण्ड के अंतर्गत मैथिलीशरण गुप्त ने भारतवर्ष के गौरवशाली इतिहास की प्रस्तावना प्रस्तुत की है। इसके अंतर्गत उन्होंने हमारे आदर्श और सभ्यता के गौरवशाली तत्त्वों का संक्षिप्त स्मरण कराया है। वे भारतवर्ष को पूरी दुनिया के सिरमौर के रूप में स्मरण करते हैं, जिसके समान इस धरा पर कोई और देश नहीं है–

"भू–लोक का गौरव, प्रकृति का पुण्य लीला–स्थल कहाँ?
फैला मनोहर गिरि हिमालय और गंगाजल जहाँ।
सम्पूर्ण देशों से अधिक किस देश का उत्कर्ष है?
उसका कि जो ऋषि भूमि है, वह कौन? भारत वर्ष है।
हाँ, वृद्ध भारत वर्ष ही संसार का सिरमौर है,
ऐसा पुरातन देश कोई विश्व में क्या और है?"[8]

प्राचीनकाल में भारतवर्ष की शासन व्यवस्था अत्यंत सुदृढ थी। हमारे पूर्वज अत्यंत वीर एवं धीर पुरुष थे। उनकी कीर्ति का यशगान न सिर्फ भारतीय करते थे, बल्कि सम्पूर्ण संसार उनका यशगान करता था। यहाँ के वीर एवं धीर पुरुषों की अपने धर्म के प्रति अटूट आस्था थी। वे धर्म की रक्षा के लिए सदैव अपने प्राणों को तिनके की तरह न्यौछावार करने के लिए सदा तैयार रहते हैं–

"वे धर्म पर करते निछावर तृण–समान शरीर थे,
उनसे वही गंभीर थे, वह वीर थे, ध्रुव धीर थे।"[9]

भारतवर्ष के साहित्य, प्राकृतिक संपदा, कला–कौशल, ज्ञान–विज्ञान और सामाजिक व्यवस्था का भी अत्यंत गौरवशाली इतिहास रहा है। सम्पूर्ण विश्व में हमारे साहित्य का विस्तार था। नवोन्मेष हमारे साहित्य की उत्कृष्टता थी। हमारा साहित्य सम्पूर्ण विश्व के साहित्य का उपवन था। साहित्य के गौरवशाली इतिहास को प्रस्तुत करते हुए मैथिलीशरण गुप्त ने लिखा है–

"साहित्य का विस्तार अब भी है हमारा कम नहीं,
प्राचीन किंतु नवीनता में अन्य उसके सम नहीं।"[10]

वर्तमान खण्ड के अंतर्गत मैथिलीशरण गुप्त ने भारत वर्ष के दारिद्रय, नैतिक पतन, अव्यवस्था, आपसी भेदभाव, देश की दुर्दशा, गोवध व्यापार, धार्मिक आडंबर और नारी दुर्दशा का वर्णन किया है। अतीत खण्ड के अंतर्गत उनकी जिस लेखनी ने भारत के गौरव का यशगान किया था, अब वह वर्तमान खण्ड के अंतर्गत उसी भारत के अपकर्ष का वर्णन कर रही थी। यही कारण है कि वर्तमान खण्ड को लिखते हुए मैथिलीशरण गुप्त अत्यधिक व्यथित हो गए थे। वर्तमान खण्ड के 'प्रवेश' में उन्होंने अपनी व्यथा को लिखा भी है–

"जिस लेखनी ने है लिखा उत्कर्ष भारतवर्ष का,
लिखने चली अब हाल वह उसके अमित अपकर्ष का।"[11]

तत्कालीन समाज विभिन्न प्रकार की कुरीतियों और कुप्रथाओं का केंद्र हो गया था। समाज में चारों तरफ अंधपरंपरा, बेजोड़ विवाह, वर–कन्या विक्रय, दासत्व, नशेबाजी, आत्म–विस्मृति, अनुदारता, गृह–कलह, व्याभिचार, मतिभ्रम और तमाम विकृतियां फलने–फूलने लगी थीं। कृषि की दुर्गति अत्यंत सोचनीय स्थिति में पहुँच चुकी थी। मैथिलीशरण गुप्त न सिर्फ कृषि की दुर्गति से चिंतित हैं, बल्कि किसानों की दुर्दशा के प्रति भी वे सचेत हैं। उन्होंने किसानों की जमीनें छिन जाने और उन पर बढ़ते ऋण और ब्याज के दुष्चक्र का पर्दाफाश भी किया है। लगान की बढ़ती कीमतों और अंधाधुंध वसूली का वर्णन उन्होंने बखूबी किया है। भारतीय संपत्ति के दोहन का वर्णन करते हुए उन्होंने लिखा है–

"अब पूर्व की–सी अन्न की होती नहीं उत्पत्ति है,
पर क्या इसी से अब हमारी घट रही संपत्ति है?"[12]

भारतीयों ने अंग्रेजी शिक्षा व्यवस्था को पूर्णतया अपना लिया था, जिसके केंद्र में मानवीय मूल्यों का विकास न होकर सिर्फ नौकरी थी। इतना ही नहीं इस शिक्षा व्यवस्था के रक्षक ऐसे लोग थे जिनका सामान्य जनसरोकार से कोई लेना–देना नहीं था। यही कारण है कि मैथिलीशरण गुप्त ने मैकाले की नीति पर आधारित शिक्षा व्यवस्था का पुरजोर विरोध किया है। वे इस तथ्य से पूर्णतया अवगत थे कि अंग्रेजों की शिक्षा नीति भारतीयों को मानसिक गुलामी की ओर धकेलने का काम कर रही है। यह शिक्षा व्यवस्था नैतिकता और मनुष्यता आधारित न होकर नौकरी प्राप्त कर लेने तक सीमित है। इस सच्चाई को भी नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है कि अंग्रेजों ने यह शिक्षा व्यवस्था अपने हित को सर्वोपरि रखते हुए बनाई थी न कि भारतीयों को शिक्षित करने हेतु। तत्कालीन शिक्षा की दुर्व्यवस्था का वर्णन करते हुए उन्होंने लिखा है–

"शिक्षे! तुम्हारा नाश हो, तुम नौकरी के हित बनी,
लो मुर्खते! जीती रहो, रक्षक तुम्हारे हैं धनी!!"[13]

तत्कालीन समय में समाज के अधर्मी लोग धन के बल पर धर्म के रक्षक बन गए थे। समाज में चारों तरफ धार्मिक आडंबरों और पाखंडों का बोलबाला था। जो अंदर से मलिन थे, वे भव्यता का चोला पहन रखे थे। समाज में अब जितने पुरुष थे, उतने ही पंथ थे। उन सभी आडम्बरों और पाखंडों का वर्णन करते हुए मैथिलीशरण गुप्त ने लिखा है–

"धनवान ही धार्मिक बने, यद्यपि अधर्मासक्त हैं,
है लाख में दो चार सु–हृदय शेष बगुला भक्त हैं।"[14]

मैथिलीशरण गुप्त वर्तमान खण्ड का वर्णन करते हुए व्यथित जरूर हैं, लेकिन निराश नहीं हैं। वे आशान्वित भी हैं। यही वजह

है कि इस कालखण्ड के अंतर्गत वे भारतवर्ष के अपकर्ष का वर्णन करते हुए भी स्थान–स्थान पर सामाजिक नूतनता की माँग और पुकार भी करते हैं–

"दाता, तुम्हारी जय रहे, हमको दया कर दीजियो,
माता! मरे हा! हा! हमारी शीघ्र ही सुध लीजियो।"[15]

भविष्य कालखण्ड के अंतर्गत मैथिलीशरण गुप्त ने आशा, आदर्श और विश्वास की प्रस्तुति की है। उन्होंने समस्त भारतवर्ष के सभी जाति के लोगों, साधु–संतों, नेताओं, कवियों, नवयुवकों और धनिकों को उनके कर्तव्य–बोध का स्मरण कराते हुए उन्हें भारत के भविष्य निर्माण का संदेश दिया है। उन्होंने इस कालखण्ड के अंतर्गत समस्त ज्ञान, विचार, विवेक और चिंतन की सीमा को छूते हुए तत्कालीन समाज में मौजूद प्रत्येक समस्या के समाधान का हल खोजने की पुरजोर कोशिश भी की है। तत्कालीन भारतवासियों को अपने पूर्वजों के अलौकिक सत्य और शील से प्रेरणा ग्रहण करने का संदेश दिया है। उनका स्पष्ट मानना है कि यदि हम अपने पूर्वजों को भूलते नहीं तो इस गुलामी रूपी संताप को झेलने के लिए कभी विवश नहीं होते–

"निज पूर्वजों का वह अलौकिक सत्य, शील निहारलो,
.....
जो आज अपने आपको यों भूल हम जाते नहीं,
तो यों कभी संताप–मूलक शूल हम पाते नहीं।"[16]

उन्होंने समस्त भारतवासियों को अपने पूर्वजों के सद्गुणों को हमेशा मन में धारण करने का संदेश दिया है। पूर्वजों के सद्गुणों को धारण करके ही हम अपना और भारतवर्ष का भविष्य उज्जवल बना सकते हैं, अन्यथा हम अपनी पहचान जीवित कौम के रूप में कभी नहीं बना सकते–

"निज पूर्वजों के सद्गुणों को यत्न से मन में धरो,
.....
वह जाति जीवित जातियों में रह नहीं सकती कहीं।"[17]

अतः मैथिलीशरण गुप्त ने गुलामी की दास्ताँ और अपने पौरुष से हताश सोये हुए भारतवासियों को जगाने का आह्वान किया है। आलस्य को त्याग कर सजग होने का सन्देश दिया है–

"हे भाइयों! सोये बहुत अब तो उठो, जागो अहो!
.....
अब भी सजग होगे न क्या? सर्वस्व तो हो खो चुके।"[18]

वे जाति, धर्म और संप्रदाय के आधार पर बंट चुके सभी भारतवासियों से एकता का आह्वान करते हैं। सभी भारतवासियों को संबोधित करते हुए उन्होंने लिखा है कि उन्हें माला के हार की तरह एकताबद्ध होकर देश को आजाद करने के लिए लग जाना चाहिए–

"आओ मिलें सब देश बांधव हार बनकर देश के"[19]

उन्होंने सभी भारतवासियों से प्रेम का साधक बनकर आपस में प्रेम–भाव से सुखी और शांतिपूर्वक रहने का आह्वान भी किया है–

"साधक बने सब प्रेम से सुख शांतिमय उद्देश्य के।"[20]

उन्होंने भारतवासियों से आपसी भेद–भाव को भुलाकर मन से मन जोड़कर जीने का संदेश दिया है। उनके अनुसार मन के मेल से ही हमारी एकता बन सकेगी–

"मन का मिलन ही मिलन है, होती उसी से एकता।
तन मात्र के हो मेल से है मन भला मिलता कहीं"[21]

उन्होंने सभी भारतवासियों से सत्यम् शिवम् सुन्दरम् की साधना का आह्वान किया है–

"आओ बनें शुभ साधना के आज के साधक सभी,
निज धर्म की रक्षा करें, जीवन सफल होगा तभी।"[22]

इसीतरह हमारा देश उन्नति कर विश्व के अन्य देशों से बराबरी कर सकता है और एक दिन उन्नति के मार्ग पर हम उनसे आगे भी बढ़ जाएंगे–

"तो कल बराबर और परसों विश्व के आगे खड़े।"[23]

अतः हम कह सकते हैं कि मैथिलीशरण गुप्त ने 'भारत–भारती' के माध्यम से परतंत्रता की विपरीत परिस्थियों में भी भारतीय अस्मिता और देश के प्रति गर्व और गौरव की भावना भारतवर्ष के जन–जन तक प्रवाहित की है। उन्होंने अपनी इस कृति के द्वारा भारतवर्ष के अतीत के गौरवशाली इतिहास को तत्कालीन समाज में पुनर्व्याख्यायित किया। यहाँ उन्होंने न सिर्फ भारतवर्ष के गौरवशाली इतिहास को व्याख्यायित किया है बल्कि इसके वर्तमान और भविष्य को आशान्वित और उन्नति का मार्ग भी प्रशस्त किया है। 'भारत–भारती' के द्वारा उन्होंने सम्पूर्ण भारतवर्ष के लोगों के अंदर नया जोश और स्फूर्ति भर दिया।

वर्तमान पीढ़ी ऐसी पुस्तकों से अनभिज्ञ है। अतः ऐसी पुस्तकों का पुनर्मूल्यांकन आवश्यक है, जिससे कि वर्तमान पीढ़ी भारत के गौरवशाली इतिहास से प्रेरित होकर अपने वर्तमान और भविष्य को अत्यधिक सुंदर और समृद्ध बना सके; उसी तरह जैसे मैथिलीशरण गुप्त 1912 ई. में 'भारत–भारती' के माध्यम से कर रहे थे। हम उम्मीद कर सकते हैं कि स्वतंत्र भारतवर्ष के समस्त लोग 'भारत–भारती' से प्रेरणाग्रहण करेंगे और देश को विश्वगुरू बनने की तरफ तेजी से अग्रसित करेंगे।

'भारत–भारती' के द्वारा मैथिलीशरण गुप्त ने प्रत्येक भारतीय के अंदर नया जोश और स्फूर्ति का संचार किया है। 'भारत– भारती' ने न सिर्फ भारत की पराधीन जनता में चेतना और जोश का संचार किया बल्कि इस पुस्तक ने मैथिलीशरण गुप्त को ख्याति भी दिलाई। एक ऐसे समय में जब देश की लाचार और गुलाम जनता अंग्रेजों के अधीन थी मैथिलीशरण गुप्त ने अपने गौरवान्वित इतिहास से अवगत करा कर देश की जनता में विश्वास भरने का काम किया। उन्होंने इस पुस्तक के द्वारा समस्त भारतवासियों को ऊँच–नीच, छुआ–छूत, स्त्री–पुरूष और समाज में फैले हर तरह के भेदभाव को भुलाकर देश की उन्नति हेतु सामूहिक प्रयास करने के लिए उन्हें प्रेरित किया। वास्तव में यह पुस्तक सत्याग्रह, अहिंसा, मनुष्यत्वभाव, विश्व प्रेम और किसानों व श्रमजीवियों के प्रति प्रेम और सम्मान की गाथा है। इसमें भारतेंदुकाल में व्याप्त स्वदेश–प्रेम की भावना का विस्तार है। यह पुस्तक ब्रिटिश शासन व्यवस्था की कटु आलोचना है–

"शासन किसी परजाति का चाहे विवेक विशिष्ट हो,
संभव नहीं है, किंतु जो सर्वांश में वह इष्ट हो।"[24]

परतंत्र भारत में ब्रिटिश शासन व्यवस्था की ऐसी तीव्र आलोचना वास्तव में एक साहसी और प्रतिनिधि कवि ही कर सकता था। इस तथ्य से पाठक वर्ग निश्चित ही परिचित होंगे कि 'भारत–भारती' के प्रकाशन के कुछ वर्ष पूर्व ही कथा सम्राट मुंशी प्रेमचंद के कहानी संग्रह 'सोजे वतन' की प्रतियाँ ब्रिटिश सरकार द्वारा जब्त कर जला दी गई थीं। अंतः 'भारत–भारती' हमें

अन्याय, अत्याचार और शोषण के विरुद्ध निर्भीक होकर आवाज़ उठाने की सीख देती है–

"न्याय धर्म के लिए लड़ो तुम, ऋत–हित समझो बूझो,
अनय राज, निर्दय समाज से निर्भर होकर जुझो।"[25]

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि मैथिलीशरण गुप्त ने 'भारत–भारती' के माध्यम से न सिर्फ अंग्रेजी शासन के अधीन देश की राजनीतिक परिस्थितियों का आकलन किया है बल्कि बिना लाग–लपेट के पूरे समाज का सच भी हमारे सामने प्रस्तुत किया है। उन्होंने समाज के हर उस वर्ग की आवाज बनने की कोशिश की है जो दीन–हीन दशा में जीवन जीने को अभिशप्त है। मैथिलीशरण गुप्त को जितना भारत के इतिहास का ज्ञान है उतना ही वर्तमान सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक परिस्थितियों का भी। एक ओर जहां उन्होंने उपनिषद, वेद, दर्शन, गीता, ज्योतिष, अंकगणित, रेखागणित, सामुद्रिक और फलित ज्योतिष, भाषा और व्याकरण, चित्रकारी, कवि और काव्य, मूर्तिनिर्माण, संगीत, अभिनय आदि के संदर्भ में देश की जनता को अपनी प्राचीन और ऐतिहासिक धरोहर से अवगत कराया और भारत की विश्व में श्रेष्ठता स्थापित किया वहीं दूसरी ओर उन्होंने देश की जनता के अंग्रेजों द्वारा शोषण, कृषि की दुर्गति और भारतीय धन के दोहन के प्रति भी चिंता व्यक्त किया है। साथ ही उन्होंने समाज में व्याप्त बेजोड़ विवाह, वर कन्या विक्रय, नशेबाजी, व्यभिचार जैसी सामाजिक कुरीतियों के खिलाफ समाज के प्रत्येक वर्ग को जगाने का प्रयास भी किया है। हिंदू–मुसलमानों के बीच की धार्मिक कट्टरता और सांप्रदायिकता को समाप्त करने की इच्छा रखते हुए उन्होंने दोनों वर्गों को अंग्रेजो के खिलाफ साथ मिलकर समाज को सुदृढ़ता की ओर ले जाने का आह्वान भी किया है। अतः 'भारत–भारती' सामाजिक प्रतिबद्धता का निर्वहन करते हुए अपनी प्रासंगिकता के साथ हमारे साथ खड़ी है।

संदर्भ सूची

1. भारत–भारती– मैथिलीशरण गुप्त, पृष्ठ–समर्पण, साहित्य–सदन, चिरगाँव (झाँसी), सं–1984
2. हिंदी साहित्य का इतिहास– डॉ नगेंद्र डॉ हरदयाल, मयूर पेपरबैक्स, संस्करण 2012, पृष्ठ सं 487
3. हिंदी साहित्य का इतिहास– आचार्य रामचंद्र शुक्ल, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, संस्करण 1999, पृष्ठ सं 613
4. हिंदी साहित्य का इतिहास– डॉ नगेंद्र डॉ हरदयाल, मयूर पेपरबैक, संस्करण 2012, पृष्ठ सं 477
5. भारत–भारती – मैथिलीशरण गुप्त, साहित्य सदन चिरगांव झांसी, अड़तालिसवाँ संस्करण 2021, पृष्ठ सं 7–8
6. हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास– रामस्वरूप चतुर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन, संस्करण 2011, पृ. सं–97
7. भारत–भारती, पृष्ठ प्रस्तावना
8. भारत–भारती, पृष्ठ सं 4
9. भारत–भारती, पृष्ठ सं 5
10. भारत–भारती, पृष्ठ सं 30
11. भारत–भारती, पृष्ठ सं 85
12. भारत–भारती, पृष्ठ सं 91
13. भारत–भारती, पृष्ठ सं 114
14. भारत–भारती, पृष्ठ सं 125
15. भारत–भारती, पृष्ठ सं 88
16. भारत–भारती, पृष्ठ सं 154
17. भारत–भारती, पृष्ठ सं 154
18. भारत–भारती, पृष्ठ सं 155
19. भारत–भारती, पृष्ठ सं 157
20. भारत–भारती, पृष्ठ सं 157
21. भारत–भारती, पृष्ठ सं 157
22. भारत–भारती, पृष्ठ सं 167
23. भारत–भारती, पृष्ठ सं 167
24. आधुनिक काव्य धाराः विचार और दृष्टि– ओमप्रकाश सिंह, पृष्ठ सं 23
25. वही– पृष्ठ सं 30